5

''वे अति आनन्दित हुए''

कहीं भी जाने या कुछ करने से पहले हम आमतौर पर पूछते हैं, ''मुझे क्या करना होगा ?'' आराधना कोई अपवाद नहीं है। यदि आपको प्रश्न पूछना है तो सम्भवतया आपको अभी कोई उत्तर नहीं मिल पाएगा। पहले आपको कुछ सफ़र यानी एक यात्रा करनी होगी जो, परमेश्वर के साथ जाना है। जब आप उस सफ़र पर चल पड़ेंगे तब ही आप जान पाएंगे।

मत्ती 2 अध्याय वाले पण्डित तारे का पीछा करते-करते यरूशलेम आए थे। वहां पहुंचने पर उन्होंने पूछा कि मसीहा का जन्म कहां हुआ है। उन्हें बताया गया कि मीका नबी ने भविष्यवाणी की थी कि उसका जन्म बैतलहम में होगा। बैतलहम को निकलते समय फिर से ''उस तारे को देखकर वे अति आनन्दित हुए'' (आयत 10)। आराधना में आनन्द मिलता है। जिन लोगों को आराधना करने की आदत पड़ गई है, उन्हें आराधना करने का विचार भी अच्छा लगता है।

बेशक बाइबल विशेष रूप से यह नहीं बताती कि मोरिया पहाड़ पर अपने अनुभव से आने के बाद अब्राहम को कैसा लगा था, परन्तु उस स्थान को ''यहोवा उपाय करेगा'' (उत्पत्ति 22:14) नाम देने से उसके आनन्द का पता चलता है। *यहोवा ने उपाय कैसे किया था!* केवल कल्पना ही की जा सकती है कि इसहाक के साथ पहाड़ से नीचे आने पर अब्राहम को कैसा महसूस हो रहा होगा। उसे वह पुत्र वापस मिल गया था, जिसे अपने दिल से उसने परमेश्वर के लिए बलिदान कर दिया था। स्वर्गदूत की घोषणा के बाद विशेष तौर पर वह आनन्द से भर गया था।

> यहोवा की यह वाणी है, कि मैं अपनी ही यह शपथ खाता हूं, कि तू ने जो यह काम किया है कि अपने पुत्र, वरन अपने एकलौते पुत्र को भी, नहीं रख छोड़ा; इस कारण मैं निश्चय तुझे आशीष दूंगा; और निश्चय तेरे वंश को आकाश के तारागण, और समुद्र के तीर की बालू के किनकों के समान अनगिनित करूंगा, और तेरा वंश अपने शत्रुओं के नगरों का अधिकारी होगा और पृथ्वी की सारी जातियां अपने को तेरे वंश के कारण धन्य मानेंगी क्योंकि तू ने मेरी बात मानी है (उत्पत्ति 22:16-18)।

पण्डितों और अब्राहम के विवरणों से समझ आता है कि ''आराधना के लिए जो भी परमेश्वर की इच्छा को पूरा करता है आनन्द के लिए उसकी अपनी इच्छा पूरी हो जाएगी।''[1] बेशक आराधना परमेश्वर से यह आनन्द पाने के विशेष उद्देश्य के लिए नहीं होनी चाहिए, फिर भी उसकी ईश्वरीय उपस्थिति में निकट आने का स्वाभाविक परिणाम यही है। ''इस तथ्य का कि आराधना को मुख्यतया निजी प्रतिफल पाने के अवसर के रूप में नहीं देखा जाना चाहिए, अर्थ यह नहीं है कि आराधना में निजी प्रतिफल नहीं मिलते।''[2]

एक आत्मिक आनन्द

आराधना से मिलने वाला आनन्द अच्छा समय बिताने या मनोरंजन के सांसारिक आनन्द

जैसा नहीं है। हर प्रकार का भौतिक या सांसारिक आनन्द थोड़ी देर का, जल्दी बीत जाने वाला है। एल्फ्रेड पी.गिबस ने सही कहा है:

> यह ''प्रभु का आनन्द, जो हमारी सामर्थ है'' मन के उल्लास से न उलझाया जाए, जो लापरवाह और परमेश्वर रहित सांसारिकता उन अवसरों पर दिखाती है जब यह अपने विचारों से परमेश्वर को निकालने के योग्य होकर अपनी आंखें अपने पापी होने और उस स्थिति में मरने के भयानक परिणामों के तथ्य से बन्द करता है।[3]

यह वह गहरा, बना रहने वाला भीतरी आनन्द है, जिसकी बात यूहन्ना 16:22 में यीशु ने अपने चेलों से बात करते समय की थी ''... परन्तु मैं तुम से फिर मिलूंगा और तुम्हारे मन में आनन्द होगा; और तुम्हारा आनन्द कोई तुम से छीन न लेगा।'' यह आनन्द किसी मनोरंजक घटना के बाहरी आनन्द से कभी नहीं आ सकता था बल्कि परमेश्वर के साथ निकट सम्बन्ध के भीतरी ज्ञान से ही आता है। न ही यह आनन्द केवल गरम अर्थात ''अस्पष्ट'' अहसास है, बल्कि शान्ति और संतुष्टि से मिलने वाला आनन्द है, जो मन के तूफ़ानों को शान्त करने वाला और आराम करने की वह जगह है जहां भीतरी व्यक्ति परमेश्वर में विश्वास का लंगर डालता है।

मसीही आनन्द का उल्लेख आराधना के संदर्भ के अलावा और संदर्भों में भी मिलता है। फिलिप्पियों के नाम पत्र में पौलुस का बार-बार यही विषय था। इस छोटे से पत्र में पौलुस ने कम से कम सात बार ''आनन्द'' का उल्लेख किया। 1:25 में हमें उसके इस विश्वास की अभिव्यक्ति मिलती है कि उसे भाइयों को ''विश्वास में दृढ़'' करने के लिए उनके साथ रहने की अनुमति मिली। उसने उनसे एक मन और एक चित्त होने के लिए कह कर उसका ''आनन्द पूरा'' करने के लिए कहा (2:2)। फिर उसने उन्हें ''प्रभु में आनन्दित'' रहने का आग्रह किया (3:1; 4:4)। पौलुस ने फिलिप्पी के मसीही लोगों को अपने ''आनन्द और मुकुट'' बताया (4:1) और उन्हें आश्वस्त किया कि वह उसके लिए उनकी चिन्ता पर ''प्रभु में बहुत आनन्दित'' था (4:10)। परमेश्वर के साथ उसकी नज़दीकी में चलने और बार-बार उसकी आराधना करने का परिणाम आनन्द के रूप में मिलता है। परमेश्वर ने हमें केवल आराधक होने के लिए नहीं बल्कि आनन्द से भरे आराधक होने के लिए बनाया।

परमेश्वर की नजदीकी से आराधना करने पर मिलने वाले आनन्द में कम से कम तीन बातें मिलती हैं। अपने स्वभाव से ही आराधना में *अहसास* होना आवश्यक है। सच्ची आराधना का परिणाम *पूरा होने में मिलेगा और इसे अचम्भे और भय* में व्यक्त किया जाएगा।

अन्दर से आनन्द

इस बात की समझ आने पर कि अच्छा लगना इस बात की गारण्टी नहीं है कि हमने सचमुच आराधना की है, कई आराधकों को आराधना में किसी अभिव्यक्ति का पता ही नहीं चलता। भावना से पता चलना चाहिए या नहीं कि हमने आराधना में क्या किया (जो कई बार ''अच्छा लगने वाला'' धर्म से थोड़ा बढ़कर लगता है), आनन्दपूर्ण भावना सच्ची आराधना से ही मिलती है। भावनाओं के बाद व्यवहार आता है। मनोवैज्ञानिक हमें बताते हैं कि भावना को चलाना कठिन

है, पर व्यवहार को चलाना कठिन नहीं है। यह जानते हुए कि हम परमेश्वर के हैं और उसकी उपस्थिति में हैं हम आनन्द की भावना से भर जाते हैं। अपने बारे में परमेश्वर की प्रकट इच्छा के ज्ञान पर काम करने और इस तथ्य से कि उसने हमें आराधक होने के लिए बनाया हमें आनन्द मिलता है। हमें भावनाओं के पीछे ही नहीं चलना चाहिए, परन्तु हमें भावनाओं को आराधना के सुरों से अपने पीछे चलने और संसार में वापस जाने देना चाहिए।

परमेश्वर ने हमें आराधना करने के लिए बनाया है और आराधना को उसने मन से महसूस किए जाने के लिए बनाया है। बिना अहसास के ''आत्मा और सच्चाई'' (यूहन्ना 4:24) से आराधना करने की बात यदि असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य होगी। हमारे लिए ''आत्मा'' के साथ-साथ सच्चाई से आराधना करना इसलिए आवश्यक है क्योंकि ''परमेश्वर आत्मा है।'' वास्तव में वह अलौकिक आत्मा है। यह जानते हुए कि हमारी आत्माएं आराधना के द्वारा परमेश्वर के अलौकिक आत्मा की उपस्थिति में आई हैं, हम आनन्द से क्यों नहीं आएंगे? जब मेरी मानवीय आत्मा आराधना में परमेश्वर के आत्मा से जुड़ती है, तो मुझे कुछ अहसास होता है। राबर्ट वैबर का मानना था कि हमारा ''सैकुलर युग'' जिसमें ''परमेश्वर को हमारे अस्तित्व की सीमाओं से बाहर कर दिया गया है, आराधना को अलौकिक के साथ सम्पर्क में आने के माध्यम के रूप में आराधना के अनुभव को कठिन'' बना देता है।[4]

ए.डब्ल्यू. टोज़र ने कहा है, ''आराधना अन्दर के व्यवहार से निकलनी आवश्यक है। इसमें मानसिक, आत्मिक और भावनात्मक कई तथ्य लिपटे हैं।''[5] जैक हेफर्ड ने माना कि ''हर विश्वासी में यह समझने की बुद्धि होती है कि आराधना का एक आयामी अभ्यास नहीं है। ... पवित्र शास्त्र के अनुसार 'आत्मा और सच्चाई से' आराधना में *आत्मा, मन, भावनाएं* और *शरीर* सबका शामिल होना आवश्यक है।''[6]

आरम्भ में आराधना पाने के आनन्द की नहीं बल्कि देने का आनन्द है। परन्तु अन्त में हमें उससे अधिक मिलता है, जितना हम देते हैं। जब अब्राहम मानसिक और भावनात्मक रूप से परमेश्वर को इसहाक को दे देने के बाद पहाड़ से नीचे आया, तो न केवल उसे वह जो उसने दिया था वापस मिला बल्कि स्वर्गदूत द्वारा की गई घोषणा से परमेश्वर की अतिरिक्त आशीष भी मिली थी। अब्राहम ने बिना किसी सवाल या सोच के परमेश्वर की बात मानी। जो कुछ परमेश्वर ने उसे दिया वह आने वाले कई साल तक अब्राहम को बड़ा आनन्द देता रहा होगा। हम परमेश्वर को बहुत अधिक नहीं दे सकते। जितने लोग आराधना में परमेश्वर को आशीष देते हैं, बदले में उन सबको आशीष मिलेगी। यीशु के ऊपर उठाए जाने का विवरण देने के बाद लूका ने कहा कि चेले ''उस को दण्डवत करके बड़े आनन्द से यरूशलेम को लौट गए। और लगातार मन्दिर में उपस्थित होकर परमेश्वर की स्तुति किया करते थे'' (लूका 24:52, 53)।

आनन्द की सबसे बड़ी अभिव्यक्तियों में से एक गाना है। पूरी बाइबल में गाने को आराधना की अभिव्यक्ति के रूप में बताया गया है। जब पौलुस ने ''अपने-अपने मन में प्रभु के सामने और कीर्तन करते'' (इफिसियों 5:19ख) रहने के लिए कहा तो उसने गाने के संदर्भ में ही बात की थी। मन से निकला सुर परमेश्वर की महिमा करने वाले शुद्ध मन से जताया गया आनन्द होना आवश्यक है। इसके साथ की आयत में पौलुस ने ''अपने मनों में परमेश्वर के लिए धन्यवाद के साथ गाने'' का आग्रह किया (कुलुस्सियों 3:16)। फिर गाने में धन्यवाद का मन से आनन्द

दिखाया गया। ''संगीत आनन्द की उन ऊंचाइयों को पैदा कर सकता है, जिन्हें किसी और ढंग से मिलाया नहीं जा सकता।''[7] ''पवित्र गीतों में मन में मुस्कुराहट भरने की सामर्थ है।''[8] इस्राएलियों को परमेश्वर द्वारा मिस्री दासता में से लाए जाने के बाद से ही गाना आराधना का भाग था।

आराधनापूर्ण शारीरिक स्थिति में भी भावनाओं को व्यक्त किया जा सकता है। जैसा कि हमने पहले ही देखा था, मन की अभिव्यक्तियों के रूप में आराधना के संदर्भ में, दण्डवत करने, घुटने टेकने और हाथ ऊपर उठाने का उल्लेख बाइबल में है। शारीरिक स्थिति के सम्बन्ध में निर्णायक बात यह है कि आराधक की स्थिति उस ढंग की गम्भीर अभिव्यक्ति होनी चाहिए, जिसे वह सचमुच परमेश्वर के प्रति महसूस करता है, न कि लोगों को दिखाने के लिए।

मन को भरने वाला आनन्द

संसार के अधिकतर धार्मिक प्रबन्ध भय के द्वारा चलते हैं। आराधक अपने देवताओं के मन्दिर में उनके क्रोध के कारण आने वाली किसी विपत्ति को दूर भगाने की आशा से भय और आतंक के कारण आते हैं। देवताओं के पास उस आशा से आना उपयुक्त उपहार होगा, आमतौर पर उनके मन में यह संदेह रह जाता है कि उन्हें प्रसन्न करने के लिए वे उपहार काफी नहीं होंगे। किसी सीमा तक पुराने नियम के बलिदानों की पद्धति में यही बात पाई जाती थी। परन्तु अब परमेश्वर के मेमने अर्थात मसीह के बलिदान के कारण आराधक परमेश्वर के सिंहासन तक उस ''बड़े आनन्द'' के साथ आ सकते हैं, जो मन में भरपूरी ले आता है। यहां तक के सताए जाने वालों को भी यीशु ने कहा, ''आनन्दित और मगन होना क्योंकि तुम्हारे लिए स्वर्ग में बड़ा फल है ...'' (मत्ती 5:12)। यदि हम सताव में आनन्द की भरपूरी पा सकते हैं, तो ''अपनी महिमा की भरपूरी के सामने मगन और निर्दोष करके खड़ा'' (यहूदा 24ख) करने के लिए हमें और कितने आनन्द से भरेगा!

हमारी सबसे बड़ी इच्छाओं में से एक भरपूर होना या जो कुछ करते हैं उसमें संतुष्ट होना है। एक जवान काम का चयन करने का निर्णय लेने की कशमकश में होता है क्योंकि वह अपने जीवन को किसी ऐसे काम में लगाना चाहता है जिससे उसे संतुष्टि और भरपूरी मिले। मैंने एक जवान माता से बात की, जो अपने पारिवारिक ज़िम्मेदारियों के अलावा नौकरी की तलाश में थी, क्योंकि उसके शब्दों में उसे ''कुछ कमी महसूस होती'' थी। सुकून का इस्तेमाल प्रसन्नता के लिए भी किया जाने लगा है। कई बार मन की तड़प को शरीर की तड़प से उलझा दिया जाता है। शरीर को संतुष्ट करने की तलाश कभी मन की तड़प को पूरा नहीं कर सकेगी। परमेश्वर ने हमें कार्य करने और उसके साथ मेल में सुकून ढूंढ़ने के लिए बनाया है। उसने हमें अपने लिए रहने की जगह के रूप में बनाया है (1 कुरिन्थियों 6:19)। जब हम संसार की हर और बात को निचोड़ कर परमेश्वर द्वारा अपने लिए बनाई भीतरी जगह में रखते हैं तो पूर्णता हमसे दूर रहेगी। सच्ची आराधना उस खालीपन को भरती है यानी यह हमारे जीवनों में परमेश्वर की उपस्थिति को निमन्त्रण देती है। भरपूरी परमेश्वर के साथ संगति में ही मिलती है।

गिबस ने सही कहा था, ''आराधना केवल आराधक को आनन्द ही नहीं देती बल्कि यह उसे मन की संतुष्टि भी देती है। यह *आत्म*-संतुष्टि का उलट है, जो अपने साथ पक्षपात भरे काम के कारण होता है।''[9] आराधना के द्वारा विश्वासी परमेश्वर को और बेहतर ढंग से जानते और उसका

धन्यवाद करते हैं। उसे जानने का अर्थ उससे प्रेम करना है। उससे प्रेम करने का अर्थ उसे आदर देना और उसकी महिमा करना है। उसे आदर देने और उसकी महिमा करने का अर्थ उसकी उपस्थिति से मन को भरना यानी उससे भरपूर होना है। उससे भरपूर होने का अर्थ यह है कि हम जानते हैं कि वह हमें संभालता है और हमें मालूम है कि हमें उसके साथ होने की आशीष मिली है यानी जब हम उसे पुकारते हैं तो वह हमारी सुनता है। भरपूरी तब आती है जब हम जीवन को उसके दृष्टिकोण से देखने लगते, उस दृष्टिकोण से निर्णय लेते और उस दृष्टिकोण में अस्तित्व के लिए अपने उद्देश्य को ढूंढ़ते हैं।

भय उत्पन्न करने वाला आनन्द

आजकल *आराधना को अनुभव करने* पर काफी ज़ोर दिया जाता है। विडंबना यह है कि कलीसिया की सभाओं में अनुभव की जाने वाली हर बात आराधना नहीं है। कोई सभा बहुत रोमांचित करने वाली, भावुक करने वाला अनुभव हो सकती है, परन्तु वह आराधना बिल्कुल नहीं है। *अनुभव* वह है जो बाद में हमारे साथ रहे और जो आमतौर पर हमें वापस ले आए। इसी कारण आराधना में अगुआई करने वाले *अनुभव* पर इतना ज़ोर देते हैं। आराधना करने वाले उसकी बात करते हैं, जो उन्होंने अनुभव किया; उन्हें बार-बार वापस ही नहीं लाया जाता, परन्तु वे दूसरों के साथ अपने अनुभव को बांटना भी चाहते हैं। जब तक हम यह नहीं समझते कि सच्ची आराधना क्या है तब तक हमें यह पता नहीं चल सकता कि सच्ची आराधना का अनुभव हुआ है या नहीं। परमेश्वर हममें क्या अनुभव कराना चाहता है ? हमें अपने साथ क्या लेकर जाना चाहिए, जिसकी हम बात करें और जिस पर ध्यान दें ?

परमेश्वर चाहता है कि हम उसकी उपस्थिति को अनुभव करें। आराधना में परमेश्वर के साथ संगति होती है। मेरे कहने का यह अर्थ नहीं है कि केवल प्रभु भोज में ही संगति होती है, बल्कि *उपस्थिति* और *संवाद* की संगति होती है। आराधना में हम परमेश्वर से बात करते हैं और परमेश्वर हमारे साथ बात करते हैं।[10] यह जानना कि आप *संसार के भयदायक परमेश्वर* की उपस्थिति में हैं सचमुच हिला देने वाला अनुभव है। आराधना सभा से बाहर जाकर यह कहने के योग्य होना कि ''आज मैं परमेश्वर की उपस्थिति में था'' आने वाले दिनों पर अनुभव दिखाना है। ''परमेश्वर के लिए सम्मान और श्रद्धा अर्थात भय, आश्चर्य का बोध आधुनिक आराधना की सबसे बड़ी कमी हो सकता है।''[11] वारेन वियर्सबे ने कहा है, ''बहुत से सोने वाले सन्तों ने आश्चर्य के अपने बोध को गंवा दिया है।''[12] आज लोग समझ की तलाश करते और हर बात की व्याख्या करते हैं। जिस किसी बात की वे व्याख्या नहीं कर सकते, उससे बचने की कोशिश करते हैं। रहस्यपूर्ण बात के लिए उनके मनों में जगह नहीं है। इस प्रवृत्ति ने आराधना में से रहस्य को निकाल दिया है।

परमेश्वर को मनुष्यों को व्याख्या देना या अपनी सफाई पेश करना आवश्यक नहीं है। यदि वह कोशिश करे भी तौ भी उसकी व्याख्याएं हमारी समझ से परे होंगी। अब्राहम ने परमेश्वर से उसे यह समझाने के लिए नहीं कहा था कि इसहाक का बलिदान क्यों दिया जाए। जब अय्यूब ने परमेश्वर से अपने कामों की व्याख्या और उनके औचित्य के बारे में पूछा था (अय्यूब 29-31), तो परमेश्वर बहुत देर तक खामोश रहा था। अन्त में उसने अपनी सफाई के लिए नहीं बल्कि

अय्यूब से प्रश्न करने के लिए उत्तर दिया (अय्यूब 38-41)। परमेश्वर ने प्रकट किया कि उसके ढंग इतने अद्‌भुत हैं कि मनुष्य उन्हें समझ नहीं सकता। पौलुस ने उसकी प्रशंसा करते हुए कहा, ''आहा! परमेश्वर का धन और बुद्धि और ज्ञान क्या ही गंभीर है! उसके विचार कैसे अथाह, और उसके मार्ग कैसे अगम हैं!'' (रोमियों 11:33)।

बेशक, परमेश्वर आज मसीही लोगों को याजकाई के सभी अधिकार और आशिषें देता है परन्तु उसके पास आत्मविश्वास के साथ पहुंचने का अर्थ यह नहीं है कि हम उसे लापरवाही से लें। आनन्द में जश्न होता है, परन्तु यह अनावश्यक घनिष्ठता को उचित नहीं ठहराता। परमेश्वर चाहता है कि हमें यह पता हो कि उस तक पहुंचा जा सकता है और वह चाहता है कि हम उसकी उपस्थिति को ढूंढ़ें; परन्तु वह ज्ञान ''अतिश्योक्ति बन जाता है यदि हम परमेश्वर की उपस्थिति में आने वाली हर आकृति को देखकर भागकर उसकी गोद में कूद पड़े, उसके गले में बाहें डालकर उसे 'पिता जी' कहने लग पड़े!''[13] जश्न और श्रद्धा एक-दूसरे के विरोधी नहीं हैं। परमेश्वर की सामर्थ के भय में खड़े होने की आवश्यकता का अर्थ यह नहीं है कि हम उसके प्रेम और हमारे लिए उसकी संभाल को न मनाएं। 2 इतिहास 29:30 उन कई आयतों में से एक है, जो *आनन्द* और *स्तुति* को *दण्डवत करने* के संदर्भ में ही बयान करता है। नहेम्याह ने परमेश्वर को ''महान और भययोग्य'' कहने के साथ ही उसके वफ़ादारी से वाचा को पालने और करुणा की तारीफ की (नहेम्याह 1:5)। ''... परन्तु मेरा हृदय तेरे वचनों का भय मानता है। ... मैं तेरे वचन के कारण हर्षित हूं'' (भजन संहिता 119:161, 162)।

सारांश

मेरी पत्नी बारबरा और मैं हाल ही में आराधना के बाद रविवार रात एक स्थानीय रेस्तरां में गए। कुछ सेंडविच ऑर्डर करने के लिए हम एक लाइन में लग गए। लाइन में एक और दंपती हमारे पीछे था, परन्तु उन्हें ध्यान तब आया जब दो-तीन लोग उनके साथ जुड़ गए। हम उनकी बातें सुनने की कोशिश नहीं कर रहे थे, परन्तु हम अपने आपको उन्हें सुनने से रोक नहीं पाए। वे रोमांचित थे! जिस बात ने मेरा ध्यान पहली बार खींचा वह थी ''आज कलीसिया में सचमुच बहुत अच्छा लगा!'' उसके बाद उनकी बातें सुनने में मेरी दिलचस्पी बढ़ गई।

जैसे-जैसे मैं उनकी बातें सुन रहा था, मुझे आश्चर्य हो रहा था कि क्या वे जिसकी बातें कर रहे थे, वह आराधना थी भी कि नहीं। मैं आराधना में ''बढ़िया समय'' होने के विरोध में बिल्कुल नहीं हूं परन्तु उनकी बातचीत से ऐसा लग रहा था जैसे वे आराधना से नहीं बल्कि नाच-गाने की सभा से होकर आए हों। मैंने एक विशेष संगीत के ''नंबर'' की बात सुनी कि उसे गाने वाले का अंदाज कितना खूबसूरत था। मेज़ पर बैठे हर व्यक्ति ने गाने वाले और उसके अभिनय की ही बात की कि सबसे बढ़िया कौन था। मैं सुनता रहा कि कोई उसकी महानता की बात करेगा जो अकेला आराधना के योग्य है। परमेश्वर के लिए भय और सम्मान के किसी संकेत की मेरी तलाश बेकार निकली। उनका ध्यान स्पष्ट तौर पर परमेश्वर के भययोग्य होने पर नहीं बल्कि ज़बर्दस्त अभिनय पर था।

लूका 16:15 में यीशु ने ऐसे गुमराह समर्पण की बात की ''तुम तो मनुष्यों के साम्हने अपने आप को धर्मी ठहराते हो: परन्तु परमेश्वर तुम्हारे मन को जानता है, क्योंकि जो वस्तु मनुष्यों की

दृष्टि में महान है, वह परमेश्वर के निकट घृणित है।'' इस आयत पर टिप्पणी करते हुए गिबस ने कहा:

> यह मसीही के दिल का पता कैसे लगाएगा! अत्यधिक मधुर सुर में, आराधना का सुन्दर भजन और वह भी स्पष्ट सुनाई देने वाली आवाज़ में, चुनिंदा और बाइबल की भाषा में किसी सभा की आराधना में अफसोस के साथ गाना और फिर भी परमेश्वर के कान तक पहुंचना या ईश्वरीय स्वीकृति पाने में असफल होना [सम्भव] है।[14]

आराधना परमेश्वर पर केन्द्रित होकर दिल की गहराई से निकलनी चाहिए। यही वह दिल है, जिसे उसके पवित्र नाम की प्रशंसा और स्तुति करने में संतुष्टि और भरपूरी मिलेगी।

टिप्पणियां

[1]एल्फ्रेड पी. गिबस, *वरशिप: द क्रिश्चियन 'स हाइट्स ऑक्यूपेशन,* द्वितीय संस्क. (कैनसस सिटी, कैनसस: वाल्टरिक पब्लिशर्स, तिथि नहीं), 243. [2]डॉन चैम्बर्स, *शोटाइम! वरशिप इन द एज ऑफ़ शो बिजनेस* (नैशविल्ले: ट्वंटी फर्स्ट सेंचुरी क्रिश्चियन, 1997), 179. [3]गिबस, 43-44. [4]रॉबर्ट ई. वेब्बर, *वरशिप इज़ ए वर्ब: ऐट प्रिंसिपल्स फ़ॉर ट्रांसफोरमिंग वरशिप* (पेबॉडी, मास: हैंड्रिक्सन पब्लिशर्स, 1999), 23-24. [5]ए.डब्ल्यू. टोज़र, कंपो. एण्ड एडि. गैरलड बी. स्मित, *वाटएवर हैपनड टू वरशिप?* (कैम्प हिल, पी.: क्रिश्चियन पब्लिकेशंस, 1985), 83. [6]जैक हेयफर्ड, वर*शिप हिज़ मैजिस्टी* (डलास: वर्ड पब्लिशिंग, 1987), 131. [7]एन्न रिचमॉन्ड सेवैल, द *साउंड ऑफ़ जॉय* (सिक्रेसी, आर्क: हैमिनस्पिरेशंस, 1990), 15. [8]ऑबरी जॉनसन, *म्यूजिक मैटर्स इप द लार्ड 'स चर्च* (नैशविल्ले: टवंट्यिथ सैंचुरी क्रिश्चियन, 1995), 11. [9]गिबस, 243-244. [10]इस पुस्तक के पाठ ''उसके'' में.

[11]केन नेल्लर, ''रैवलेशन एण्ड क्रिश्चियन वरशिप,'' हार्डिंग यूनिवर्सिटी लैक्चर्स (1992): 158. [12]वारेन डब्ल्यू. वियर्सबे, बी *एमेजड: रिस्टोरिंग एन एटीट्यूड ऑफ़ वंडर एण्ड वरशिप* (व्हीटन, एल. विक्टर बुक्स/ स्क्रिप्चर्स प्रेस पब्लिशिंग, 1996), 7. [13]नेल्लर, 159. [14]कगब्स, 201.